पाखी
सृजन की उड़ान

वर्ष : 02, अंक 12, सितंबर 2010

संपादक
अपूर्व जोशी

कार्यकारी संपादक
प्रेम भारद्वाज

उप संपादक
प्रतिभा कुशवाहा

प्रसार प्रबंधक
अमित कुमार
मो. 09717581282

पृष्ठ सज्जा
मान सिंह टनवाल
आवरण पृष्ठ :
रेखा चित्र : इमरोज, राजेन्द्र परदेशी

मूल्य :

प्रति	:	20.00 रुपए
वार्षिक	:	240.00 रुपए
संस्थागत	:	400.00 रुपए

भुगतान 'इंडिपेंडेंट मीडिया इनिशिएटिव सोसायटी पब्लिकेशन डिवीजन' के नाम से किया जाए। दिल्ली से बाहर के चेक में बैंक कमीशन 30 रुपए अवश्य जोड़ें।

प्रकाशक
इंडिपेंडेंट मीडिया इनिशिएटिव सोसायटी
बी-107, सेक्टर-63, नोएडा-201303,
गौतमबुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश

सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक, प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है।
प्रकाशित रचनाओं के विचार से प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अन्तर्गत विचारणीय।

स्वामित्व इंडिपेंडेंट मीडिया इनीशिएटिव सोसायटी के लिए प्रकाशक, मुद्रक अपूर्व जोशी द्वारा श्री वृंदावन ग्राफिक्स प्रा. लि., ई-34, सेक्टर-7, नोएडा से मुद्रित एवं बी-107, सेक्टर-63, नोएडा से प्रकाशित।

दूरभाष : 0120-4070300, 4070398, 4070399, फैक्स : 0120-2406445
e-mail : pakhi@pakhi.in, pakhi@thesundaypost.in

अनुक्रमणिका

संपादकीय/अपूर्व जोशी

है एक मंजिल जो मुझे बुलाती है 3

चिट्ठी आई है 5

कहानियाँ

आदमी का बच्चा : जयश्री राय 8
सड़क जाम : दिलीप कुमार 13
सॉरी माँ : स्मिता श्रीवास्तव 22
केशव बाबू, क्यों केशव बाबू हैं : उन्मेष कुमार सिन्हा 26

कहानी जो दिल को छू गयी

जिंदगी और जोंक : अमरकांत 35

कविताएँ

निशांत 46
मनोज कुमार झा 54
कुमार अनुपम 55
रोहित प्रकाश 59
आशुतोष चन्दन 59
मृत्युंजय प्रभाकर 60
मंजुलिका पाण्डेय 61

वाद-विवाद और विमर्श

अरे इन दोउन राह न पाई : कृष्ण बिहारी 62
किस अंजाम तक पहुँचेगा... : स्वतंत्र मिश्र 65

अदबी हयात

इक्कीसवीं सदी का गल्प : राजीव रंजन गिरि 68

मीमांसा

सादगी का सौंदर्य : संजय गौतम 70
जिए गये यथार्थ का... : रामयतन यादव 72
पड़ावों से शिखर तक : सुमित्रा महरोल 74
अचेतन को जीने वाले : बलराम अग्रवाल 76
समकालीन कविता का मैनिफेस्टो : पंकज चौधरी 78
गाँव के बेनूर रंगों का रेखांकन : पुष्पपाल सिंह 80
हर पक्ष को समेटने की कोशिश : राजीव कुमार 82

समय समाज

पीपली लाइव से लुटियन लाइव : पुण्य प्रसून वाजपेयी 84

सिने-संवाद

सिनेमा के संत का अवसान : विनोद अनुपम 86

हाशिए पर हर्फ़

मेरी मुश्किलों का जो हल... : प्रेम भारद्वाज 88

ब्लॉगनामा

नारायण, नारायण,... : प्रतिभा कुशवाहा 90

ख़बरनामा 91

लघु-कथाएँ

काबिल लोग, आदर्शवादिता : तारिक असलम 'तस्नीम' 21,45

पड़ावों से शिखर तक

■ सुमित्रा महरोल

'पानी बीच मीन पियासी' आत्मकथा है साहित्य को पूर्णतया समर्पित प्रख्यात कथाकार मिथिलेश्वर जी के जीवन की विभिन्न संघर्षपूर्ण परिस्थितियों की, जो उन्हें रचनात्मकता प्रदान करते हुए परिवार, समाज व परिवेश के प्रति न केवल संवेदनशील बनाती है, अपितु असंगतियों से लड़ने की प्रेरणा भी देती है। आर्थिक स्थितियों से निरंतर जूझते हुए भी साहित्य सृजन में अनन्य भाव से रत रहने वाले साहित्य सेवी की जीवन कथा है-''पानी बीच मीन पियासी''

यह रचना साक्षी है उन सभी घटनाओं, परिस्थितियों, वेदनाओं आकांक्षाओं, अंतर्द्वंद्वों व संघर्षों की जिन्हें जीकर अत्यंत सामान्य परिवेश व परिस्थितियों से एक बालक साहित्य के प्रति अपनी निष्ठा व समर्पण के चलते कथाकार मिथिलेश्वर के रूप में परिणत हुआ। सामान्य बालक से कथाकार मिथिलेश्वर एवं फिर प्रोफेसर मिथिलेश्वर बनने का संपूर्ण लेखा-जोखा अति रोचक शैली में पूरी पठनीयता के साथ पाठक को पन्ने पलटने के लिए विवश कर देता है।

मिथिलेश्वर जी के जीवन के विभिन्न आघात-प्रतिघातों के साथ-साथ ग्रामीण जीवन परिवेश, प्रकृति की अनेक मनोहारी छवियाँ, स्थानीय बोली-बानी, ग्रामीण जनों के जातिगत बैमनस्य, खेती के कठिन संघर्ष, सामाजिक संबंधों के ताने बाने, गाँव से टूटने की पीड़ा को सहते हुए नई जगह जड़े जमाने व विस्तार पाने की जद्दोजहद जैसे अनेक प्रसंग इस कृति को महत्वपूर्ण बनाते हैं।

अनेक बिंदु हैं जिन पर दृष्टि केंद्रित कर ''पानी बीच मीन पियासी'' का विश्लेषण किया जा सकता है। ग्रामीण जीवन, समाज, प्रकृति व परिवेश का वैविध्यपूर्ण, सहज सजीव, जीवंत वर्णन हो- चाहे बहुसंख्यकों का अल्पसंख्यकों के प्रति पूर्वाग्रहों से ग्रसित, संकीर्ण अन्यायपूर्ण दृष्टिकोण- चाहे आजादी के इतने वर्षों बाद भी समाज में विद्यमान लिंग भेद की नीति हो- चाहे पुरुष की स्त्री के प्रति सामंती, पितृसत्ता का पोषण करने वाली दुराग्रही नीति- तमाम समकालीन मुद्दों पर मिथिलेश्वर जी की लेखनी अबाध गति से चली है।

बैसाडीह नामक गाँव की शस्य श्यामला हरी भरी प्रकृति की गोद में हर चिंता बाधा से दूर, अपने समाज व परिवेश से अनुभूतियाँ ग्रहण करते हुए मिथिलेश्वर जी का बचपन बीता। उनके पिता खेतिहर होने के साथ-साथ आरा शहर के एक प्रतिष्ठित कॉलेज में प्रोफेसर थे। परिवार हर दृष्टि से संपन्न था, पर पिता की मृत्यु के पश्चात परिवार की आर्थिक दशा चिंता जनक होती चली गई, क्योंकि वेतन के रूप में आय का नियमित स्रोत खत्म हो गया था। सामाजिक प्रतिबद्धताओं और पारिवारिक स्नेह आसक्तियों में आबद्ध रहते हुए युगीन यथार्थ को अनुभव के स्तर पर आत्मसात कर मिथिलेश्वर जी किशोरावस्था से ही साहित्य सृजन की ओर उन्मुख हो गए थे व बहुत जल्दी ही उनकी रचनाएँ 'धर्मयुग', 'सारिका', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' इत्यादि में स्थान पाने लगीं।

लगभग उन्नीस वर्ष की आयु में उनका विवाह रेणु नाम की मैट्रिक पास, अनिंद्य सुन्दरी, समझदार तरुणी से हो गया और ग्रेजुएशन तक वह कई बच्चियों के पिता भी बन चुके थे। शहरों में शिक्षा व रोजगार के बेहतर अवसर होने के कारण वह आरा शहर में शिफ्ट हो जाते हैं, वहाँ छोटी-मोटी नौकरियाँ हर बार उन्हें निराश करती हैं। कई-कई मोर्चों पर संघर्षों का सिलसिला यहाँ भी जारी रहता है। अत्यंत चुनौतिपूर्ण स्थितियों में, अनेक दबावों को झेलते हुए वह स्वयं एम ए करते हैं व पत्नी रेणु को टीचर की ट्रेनिंग दिलवाते हैं। ऐसे में अपनी माँ की, स्वयं की व पत्नी रेणु की अस्वस्थताओं से जूझते हुए अपनी एक संतान को तो खो भी देते हैं। कमजोर आर्थिक पक्ष अक्सर ही मिथिलेश्वर जी को तनावग्रस्त कर जाता था पर ये परिस्थितियाँ भी उनकी साहित्यिक निष्ठा को आघात न पहुँचा पाईं और उनके कहानी संग्रह, उपन्यास आदि इन स्थितियों में भी प्रकाशित होते रहे। बाह्य स्थितियाँ उन्हें तोड़ती थीं पर लेखन उन्हें फिर सजीव कर कर्मपथ की ओर अग्रसर कर देता था। अनेक बाधाओं व संघर्षों के बाद वह मनोवांछित जीविका पाते हैं।

जाति के आधार पर शोषण की अथवा बलशाली द्वारा कमजोर को प्रताड़ित करने की चर्चा बहुतायत से देखी पढ़ी जाती है पर आर्थिक रूप से सबल होने पर भी अल्पसंख्यक होने के कारण शोषित होने के एक अन्य आयाम की चर्चा इस रचना में मौजूद है।-''गाँव में बहुसंख्यक समुदाय की द्वेषपूर्ण, कपटी नीति अल्पसंख्यक परिवार को अंततः गाँव छोड़कर अन्यत्र बसने के लिए विवश कर ही देती थी। कायस्थ जाति के मिथिलेश्वर जी के पिता प्रो. बी. लाल शहर में प्रो. होने के बावजूद अपने गाँव-घर खेत-खलिहान से जुड़े रहना चाहते थे। खेती के वैज्ञानिक ढंग को अपना कर वह दूनी तीनी उपज पैदा भी कर दिखाते हैं पर गाँव के बहुसंख्यक दंबगों को यह स्वीकार नहीं होता। वह उन्हें कमजोर कर हाशिए पर रखने के

लिए रातों रात कभी उनके रहट की चोरी करवाते हैं, कभी बैलों की जोड़ी की, कभी खलिहान में पड़ी फसल पर हाथ आजमाते हैं, कभी घर पर गहनों की चोरी करवा उन्हें खुद से ऊँचा उठने के अवसर छीनने में कभी कोताही नहीं बरतते-''गाँव में तब भी ईर्ष्याजनीत द्वेष का माहौल कायम था और आज तो अपने चरम रूप में है... कृषक समाज को जब लगता है उनके बीच कोई उनसे अच्छा खाने-पीने, ओढ़ने पहनने और आगे बढ़ने लगा है तो उसके पाँव खींचना अवश्यक समझते हैं, उस पर तब तो और जब वह जातिगत धरातल पर उस गाँव का अल्पसंख्यक हो'' (पृष्ठ-62)

लेखक ने बाल्यावस्था के अनेक प्रसंगों की चर्चा की है जब उन्हें एवं उनके भाइयों को गाँव के ताकतवर बहुसंख्यक दबंगों के हाथों अपमानित व प्रताड़ित होना पड़ा था। बचपन में उनके छोटे भाई कामेश्वर की बहुसंख्यक दबंग के बेटे से बाल सुलभ लड़ाई हो जाती है। प्रत्युत्तर में बालक की बजाए उसका पिता मोर्चे पर आ खड़ा होता है और अबोध निरीह कामेश्वर पर बाँस से मारक प्रहार करता है। पुत्र पर प्रहार से तिलमिलाई माँ जब उलाहना देने पहुँचती है तो गलती स्वीकारने के स्थान पर-''जैसे आई हो ललाइन वैसे ही लवट जाओ...गाँव में रहना है तो लाला बनकर रहो नहीं तो गाँव से विदाई ही समझो!.. . वह तो भागकर बच गया, रहता तो मार कर हाथ गोड़ तोड़ देता'' (पृ.-107) इस तरह के कई प्रसंग आए हैं जब मिथिलेश्वर जी एवं उनके भाइयों के साथ अन्यायपूर्ण भेदभाव किया गया एवं उन्हें खून का घूंट पीकर, अपमानित और व्यथित होते हुए सब सहना पड़ा।

भारतीय समाज व्यवस्था में विद्यमान लिंग भेद के भी अनेक चित्र इस कृति में आए हैं-''लड़कियाँ जब तक छोटी रहतीं उनके लिए नए कपड़े भी नहीं बनवाए जाते, जब वे कुछ बड़ी होतीं तब उनके लिए कपड़े आते लेकिन बिल्कुल सस्ते. .. सारी बंदिशें लड़कियों पर ही होतीं लड़कों पर नहीं... लड़के के लिए दाल भात पर सब्जी या बजके बन जाते, लेकिन लड़कियों को अचार के साथ ही खाना पड़ता। ताज़ा खाना भी उन्हें बराबर उपलब्ध नहीं होता क्योंकि दोनों जून के बचे बासी खाने को उन्हें ही सधाना होता... गाँव की प्राइमरी पाठशाला में लड़कों को अनिवार्य रूप से पढ़ाया जाता, लेकिन लड़कियों को नहीं के बराबर... युवा होने पर सुंदर, छरहरी सुडौल लड़कियाँ भी ऐसे वरों के गले बाँध दी जातीं जो वन मानुष सदृश प्रतीत होते... उस समय हमारे गाँव और आसपास के गाँव में ऐसी शादियाँ भी हुईं जिसमें लड़कियाँ चौदह, पंद्रह की रहीं और दूल्हे साठ-पैंसठ के। यहाँ तक कि गाँव का शिक्षित समुदाय (जिसका प्रतिनिधित्व मिथिलेश्वर जी के पिता प्रो. बी. लाल करते थे) लड़कियों के प्रति अपने दृष्टिकोण में बदलाव नहीं ला पाया था-''गाँव का शिक्षित विकसित परिवार होकर भी लड़कियों में भेद के असर से मेरा घर मुक्त नहीं था. .. प्रोफेसर पिता के होते हुए भी उनके जीवन काल में मेरी दो बहनें गाँव की प्राथमिक पाठशाला में पाँचवीं कक्षा से आगे नहीं बढ़ सकीं, जबकि वहीं से हम उच्च शिक्षा तक पहुँचे... हम भाइयों की तरह व्यक्तित्व विकास से उन्हें वंचित रखा गया।'' (पृ.-116)

आज आजादी के इतने वर्षों के बाद भी लिंग भेद की यह नीति अपने विकरालतम रूप कन्या भ्रूण हत्या के रूप में विद्यमान है।

''पानी बीच मीन पियासी'' में मिथिलेश्वर जी के अलावा अनेक पात्र अपने-अपने वर्गीय चरित्र के साथ विद्यमान हैं पर सर्वाधिक अंतर्विरोधी प्रवृतियाँ मौजूद हैं मिथिलेश्वर जी के पिता प्रो. बी. लाल के चरित्र में- एक ओर तो वह एक उच्च शिक्षित, विद्वान, विलक्षण, कर्मठ, लगनशील, अत्यंत उत्साही अपने बूते बहुत ऊँची जगह बनाने में सक्षम, वैज्ञानिक दृष्टिकोण संबलित एक उद्यमी पुरुष के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। दूसरी ओर एक सामान्य ग्रामीण की भांति पत्नी की इच्छा, सुविधा, भावना को दरकिनार कर पुत्र-पुत्री तक में भेदभाव करने वाले पितृसत्तात्मक सामंती पुरुष के रूप में नजर आते हैं। शहर में बसने की पत्नी की उत्कट अभिलाषा को- जो स्वाभाविक भी थी, पति की अनुपस्थिति में गाँव में अकेले रहते हुए सात बच्चों का पालन पोषण करना सहज न था, पर पति बी.लाल ने उनकी इच्छा सुविधा, भावना का कभी सम्मान न किया व दो नावों की सवारी, अर्थात् शहर में नौकरी के साथ-साथ गाँव में खेती आजीवन करते रहे? परिणामस्वरूप तनावपूर्ण स्थितियों को लंबे समय तक न झेल पाने के कारण अल्पायु में ही रोग ग्रस्त हो मृत्यु को प्राप्त हुए। इसके विपरीत मिथिलेश्वर जी के पत्नी रेणु के साथ संबंधों को आदर्श दाम्पत्य संबंधों की श्रेणी में रखा जा सकता है। कस्बाई परिवेश में पली-बढ़ी मैट्रिक शिक्षा प्राप्त रेणु ग्रामीण जीवन को न केवल आत्मसात कर लेती है, अपितु लेखक को लेखकोचित परिवेश उपलब्ध करा साहित्य सृजन की ओर प्रवृत्त भी करती रहती है, दूसरी ओर मिथिलेश्वर जी भी सर्वत्र पत्नी के साथ सहयोग करते हुए (चाहे वह घर-गृहस्थी के कामों में हो या अन्यत्र) नजर आए हैं। उन्होंने सदैव पत्नी की सुविधा, इच्छा व भावना का सम्मान किया।

आधुनिक काल के इस दौर में बैसाडीह गाँव व आरा शहर की सामाजिकता, परस्पर आत्मीयता और सहयोग भावना कहीं गहरे तक शीतलता का अहसास कराती है। मानव यहाँ मानव के लिए अजनबी नहीं, तभी तो आरा शहर में घर बनवाते समय मिथिलेश्वर जी अनायास ही कभी विपिन बाबू तो कभी उग्रह बाबू को अपने कमरे पर अपने साथ रखते हैं जबकि दोनों से ही उनका साधारण परिचय भर ही था। मिथिलेश्वर जी इस मायने में किस्मत के बड़े धनी हैं कि सामाजिक दायरे में आने वाले अधिकतर व्यक्तियों का स्नेह सहयोग उन्हें मिला।

इंजेक्शन का रिएक्शन होने पर उनके सारे मित्र परिचित अस्पताल में उपस्थित थे और सहयोग करने में किसी ने भी कोई कसर नहीं उठा रखी थी।

एक नजरिया यह भी हो सकता है कि यह लेखक का सकारात्मक दृष्टिकोण था जो उजले पक्षों पर अपेक्षाकृत उनकी कलम ज्यादा चली है, यूं गाँव में व आरा शहर में प्रपंची लोग भी कम न थे। जैसे आरा शहर में स्कूल मास्टर के रूप में उनसे हाड़तोड़ श्रम करवा कर अति अल्प वेतन दिया जाता है, आरा में ही उनके खाली प्लॉट पर कब्जा कर एक व्यक्ति गाय-भैंस पाल लेता है, नौकरशाहों द्वारा झूठे आश्वासनों का बड़ा कटु अनुभव लेखक को लेक्चरर की नौकरी के संदर्भ में पटना में हुआ। इस तरह के अन्य प्रसंग भी यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं, पर बहुतायत से लेखक की दृष्टि सामाजिक व्यवस्था और लोगों में न्यूनताएँ व क्षुद्रताएँ ढूँढ़ने की नहीं रही है। चाहे कैसा भी कटंकाकीर्ण मार्ग क्यों न हो, उससे विचलित हुए बगैर अपना रास्ता खोजने और वहाँ तक पहुँचने की है।

मिथिलेश्वर जी के अपने परिवार के साथ संबंध भी स्नेह सौहार्द से सराबोर है। माता से आत्मीय स्नेहपूर्ण संबंधों की चर्चा तो स्नान-स्थान पर लेखक ने की ही है- मातृत्व, पत्नीत्व पर भारी पड़ता है। अपनी माँ के संदर्भ में इसे देखा भी है... ''पिताजी की अपेक्षा माँ ही हमें ज्यादा याद आती हैं। उनकी स्मृतियाँ हमारे मन में सघन और ताज़ा हैं... हमारे जीवन में माँ के इतने प्रसंग हैं कि हमें लगता है, माँ कहीं गयी नहीं है, यहीं हमारे बीच ही बनी हुई है...। और सचमुच यह एहसास ही हमारा संबल है।'' (पृ.-34)

बाकी परिवार भी स्नेह सूत्र से बंधा हुआ है। मिथिलेश्वर जी के साथ भाई, बहन एक दूसरे के दु:ख-सुख के सच्चे साथी के रूप में नजर आते हैं जो कि आज एक आदर्श स्थिति है। लेखक ने शुरू से ही अपनी पढ़ाई, अपने करिअर की अपेक्षा पारिवारिक दायित्व को अपेक्षाकृत ज्यादा तरजीह दी। पिता के बीमार होने पर व पिता की मृत्यु के पश्चात पारिवारिक जिम्मेदारियाँ निभाने में पूरे मनोयोग से माँ का साथ दिया-''माँ भी हमारे लिए ही जीती रही और हमें सहयोग करते हुए ही गुजर गई'' (पृ.-94)

संपूर्ण आत्मकथा में गजब की पठनीयता है, कहीं-कहीं आँचलिक भाषा का प्रयोग लेखक ने किया है, जिससे रचना और भी जीवंत हो उठी है। विभिन्न घटनाओं और स्थितियों पर पूरे मनोयोग से लेखक ने कलम चलाई है, पर बोझिलता का कहीं नाम तक नहीं, लेखक के साथ-साथ पाठक भी उन जीवन स्थितियों को जीता हुआ लेखक से तादाम्य कर लेता है, पर आगामी जानने की उत्कंठा उससे बराबर पन्ने पलटवाती रहती है। कुल मिलाकर आम से विशिष्ट बनने की यह यात्रा निस्संदेह साहित्य के क्षेत्र में मील का पत्थर साबित होगी।

❖❖❖

डी-160 ग्राउंड फ्लोर, रामप्रस्थ कॉलोनी,
गाजियाबाद-201011, उत्तर प्रदेश
मो. 9312045796

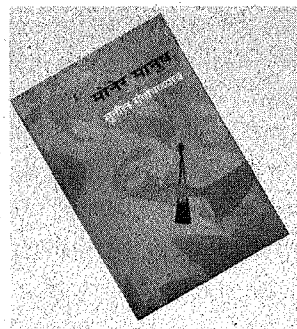

अचेतन को जीने वाले

मोनेर मानुष
सुनील गंगोपाध्याय
भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली
मूल्य : 130 रुपये /- **पृष्ठ** : 138

■ **बलराम अग्रवाल**

वयोवृद्ध बांग्ला कथाकार सुनील गंगोपाध्याय का उपन्यास 'मोनेर मानुष' कथित रूप से तो बंगाली समाज में साईं, फकीर एवं बाउल नाम से पुकारे जाने वाले लोकसंत लालन की जीवनी है, परन्तु कथाकार के कौशल ने इसे मानवमन के शास्त्र को पाठक के सामने कथारूप में प्रस्तुत करने वाला अनुपम उपन्यास बना दिया है। सन् 1890 ई. में मृत्यु को प्राप्त हो चुके लालन के जीवन से जुड़े विभिन्न तथ्य एकत्र करने के क्रम में, जैसा कि उपन्यासकार ने स्वयं स्वीकार किया है- लोक में प्रचलित कुछ धारणाओं से असहमति भी रही। उनसे उपन्यास की कथा को बचाए रखने की उन्होंने सफल कोशिश की है। अशिक्षित लालन के आध्यात्मिक ऊँचाई प्राप्त गीतों को पढ़ते हुए हिन्दी क्षेत्र के पाठक की स्मृति में संतकवि कबीर का आ जाना स्वाभाविक है। कबीर के समान ही लालन भी 'कट्टर हिन्दू एवं शरीयतपंथी मुस्लिम, दोनों सम्प्रदायों के लिए आँख की किरकिरी बने रहते थे।' लेकिन उपन्यास की कथा को पढ़ते हुए पता चलता है कि कबीर और लालन- दोनों की जीवन स्थितियाँ पूरी तरह भिन्न रही हैं।

कथा का प्रारंभ कविराज (वैद्य) कृष्णप्रसन्न सेन का घोड़ा चुराने के अपराध में पकड़े गए लालमोहन उर्फ लालू की उनके समक्ष पेशी से होता है। चोरी को स्वीकारने और